DR. INDRASEN SINGH
UG HISTORY (HONS.) SEM-III
PAPER- CC-7

04.05.2020

FIRST SINO-JAPANESE WAR (1894-95)
प्रथम चीन-जापान युद्ध (1894-95)

भौगोलिक दृष्टि से कोरिया का अत्यन्त महत्व था। कोरिया रूस, जापान और चीन तीनों देशों से घिरा हुआ था। कोरिया चीन जापान के मध्य स्थित था। राजनीतिक दृष्टि से कोरिया अपने आप को चीन के अधीन मानता था, यद्यपि उसका राजा स्वतन्त्र रूप से अपने देश पर शासन करता था। कोरिया के प्रश्न पर चीन और जापान के मध्य होने वाले संघर्ष का विश्व राजनीति पर व्यापक प्रभाव पड़ा।

19वीं शताब्दी में जापान में चहुँमुखी (all-round) विकास हुआ था। एक एशियाई देश होते हुए भी जापान अपनी समृद्धि और प्रगति के कारण अपने को पश्चिम के साम्राज्यवादी देशों के समकक्ष मानने लगा था और उन्हीं के समान साम्राज्यवादी नीति को अपनाने का इच्छुक था। जापान की दृष्टि में कोरिया का अधिक महत्व था क्योंकि उसी के द्वारा वह चीन में अपनी साम्राज्यवादी भुख को तृप्त कर सकता था। इसीलिए जापान अपना ध्यान साम्राज्यवादी विस्तार की ओर देना शुरु किया। दूसरी तरफ चीन भी अपने प्रभुत्व को कोरिया पर बनाये रखना चाहता था। अतः निम्नलिखित कारणों से दोनों देशों के बीच युद्ध होना अनिवार्य बन गया:

चीन-जापान युद्ध के कारण (Causes of Sino-Japanese War)

कोरिया की आन्तरिक स्थिति (Internal Condition of Korea)— कोरिया एक कमजोर देश था। उसकी आन्तरिक स्थिति दुर्बल थी। उसकी आमदनी सीमित थी। कोरिया अपनी सुरक्षा करने योग्य नहीं था क्योंकि वहाँ के राजनीतिक दलों की सोच अलग-अलग थी। जापान और चीन दोनों कोरिया की कमजोरी का लाभ उठाना चाहते थे। जापान अपने पड़ोसी कोरिया की दुर्बलता को अपने लिए हानिकारक समझता था और उसे डर था कि यदि किसी अन्य राष्ट्र ने उस पर अधिकार कर लिया तब यह जापान के लिए घातक होगा। चीन भी कोरिया में किसी दूसरे देश की दखल पसन्द नहीं करता था। अतः चीन और जापान की महत्वाकांक्षाओं के कारण 1994-95 ई० में दोनों देशों के मध्य युद्ध की ज्वाला धधक उठी।

रूस का प्रवेश (Russian Entrance)— रूस अपना विस्तार उत्तरी एशिया में करने के बाद वह अपना विस्तार दक्षिण की ओर करने को आतुर था। रूस की दक्षिणी-पूर्वी सीमा कोरिया से मिलती थी इसलिए वह कोरिया पर अपना अधिकार स्थापित करना चाहता था। कोरिया की सहानुभूति प्राप्त करने के लिए उसने वहाँ रूसी अधिकारी नियुक्त किये ताकि उनके निर्देशन में कोरि अपना सैनिक पुनर्गठन कर सके। बदले में कोरिया ने लजरफ (Lazaruff) का बन्दरगाह प्रदान

(शेष नोट कल उपलब्ध कराया जायेगा)

करके अपनी उदारता का परिचय दिया जहाँ रूस के जहाज बिना किसी रुकावट के आ-जा सकते थे। रूस के इस कार्य से कोरिया में उसका प्रभाव बढ़ने लगा था जो जापान को बिल्कुल सहन नहीं था, क्योंकि वह स्वयं कोरिया में अपना विस्तार करना चाहता था। जापान रूस से पहले ही अपना प्रभुत्व कोरिया में करना चाहता था।

जापान के आर्थिक स्वार्थ (Economic Interest of Japan)- जापान अपने आर्थिक स्वार्थों को पूरा करने लिए कोरिया पर अपनी गिद्ध दृष्टि जमाये हुए था। जापान में औद्योगिक विकास तेजी से हुआ था। जापान ऐसे उपनिवेशों की खोज में था जहाँ वह अपने उत्पाद की बिक्री करके अधिक लाभ प्राप्त कर सके और साथ ही अपनी आवश्यकतानुसार कच्चा माल कम मूल्य पर प्राप्त कर सके। जापान को अपने इस उद्देश्य के लिए चीन और कोरिया सर्वाधिक उपयुक्त प्रतीत होते थे। जापान के दृष्टि में कोरिया का महत्व और भी अधिक था क्योंकि जापान कोरिया होकर ही चीन पहुँच सकता था। अतः साम्राज्यवादी लिप्सा एवं आर्थिक उपलब्धियों की आशा से जापान कोरिया पर अपना अधिकार स्थापित करना चाहता था जो चीन को सहन नहीं था।

1885 ई० का चीन-जापान समझौता (Sino - Japanese Pact of 1885)- 1885 ई० में चीन और जापान के मध्य हुए समझौते से चीन के राजनेता संतुष्ट नहीं थे। इस समझौते के अनुसार दोनों देशों ने युद्ध न करके अपनी-अपनी सेनाओं को हटा लेने का वचन दिया था जिससे कोरिया में जापान और चीन की स्थिति लगभग समान हो गयी थी। लेकिन चीन के राजनीतिज्ञ लगातार इस बात पर बल दिया करते थे कि कोरिया चीनी साम्राज्य का एक अंग है और उसे अधिकार है कि वह अपने क्षेत्र में अपनी सेनाएँ रख सके तथा कोरिया में किसी तरह की अव्यवस्था होने पर वहाँ हस्तक्षेप करके शान्ति और व्यवस्था बनाना भी उसी की जिम्मेदारी है। इस प्रकार धीरे-धीरे चीन में 1885 ई० के समझौते के प्रति विरोध की भावना बढ़ती जा रही थी जिसके कारण जापान से उसका युद्ध होना अनिवार्य हो गया था।

युद्ध का तात्कालिक कारण (The Immediate Cause of the War)— 1859 ई० में कोरिया में टोंग (Tong) नाम से एक नये सम्प्रदाय की स्थापना हुई। इस नये सम्प्रदाय का गठन चीन में पूर्व-प्रचलित तीन धर्मों- बौद्ध, ताओ (Taoism) एवं कन्फ्यूशियसवाद की शिक्षाओं को मिलाकर किया गया था। टोंग सम्प्रदाय के लोग विदेशियों से घृणा करते थे। कोरिया की सरकार इस सम्प्रदाय को पसन्द नहीं करती थी। कोरिया की सरकार अपने एक आदेश के द्वारा टोंग सम्प्रदाय को प्रतिबन्धित करने का प्रयास किया। 1883 ई० में इस सम्प्रदाय के लोगों ने सरकार के पास एक निवेदन देकर यह प्रार्थना किया कि अन्य धर्मों की तरह टोंग सम्प्रदाय को भी कोरिया में अपना प्रचार-प्रसार करने दिया जाए तथा इस पर लगायी

(शेष नोट कल उपलब्ध कराया जाएगा)

गई रोक हटा लिया जाए लेकिन कोरिया की सरकार ऐसा करने से इन्कार कर दिया। फलतः स्थान-स्थान पर कोरिया में विद्रोह हुए। सरकार ने उपद्रवियों को दण्ड देने के लिए सेनाएँ भेजी किन्तु सफलता नहीं मिली। परिणामस्वरूप कोरिया की सरकार ने चीनी सरकार से सहायता की याचना की। चीनी सरकार अपनी एक सैनिक टुकड़ी कोरिया भेजी तथा 1885 के समझौते के अनुसार इसकी सूचना जापान को दी। जापान ने कोरिया की स्थिति की गम्भीरता को समझते हुए अपनी एक विशाल सेना कोरिया की राजधानी सियोल में उतार दिया। लेकिन कोरिया की सरकार चीन और जापान की सेनाओं के पहुँचने के पूर्व ही टोंग विद्रोहियों को कुचल दिया था अतः इन सेनाओं की अब कोरिया में रहने की आवश्यकता नहीं थी। फिर भी चीन और जापान की सेनाएँ कोरिया में विद्यमान रही जिससे दोनों देशों के बीच युद्ध अनिवार्य हो गया था। जापान ने चीन के सामने यह भी प्रस्ताव रखा कि दोनों के संयुक्त निरीक्षण में कोरिया में प्रशासनिक, आर्थिक एवं सैनिक सुधार किये जाए किन्तु चीन द्वारा इस प्रस्ताव को अस्वीकृत कर दिये जाने के कारण 1 अगस्त 1894 ई० को जापान ने चीन के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी।

1894-95 ई० का युद्ध (War of 1894-95) – चीन-जापान युद्ध की घटनाओं ने समस्त विश्व को आश्चर्य में डाल दिया। यूरोपीय देशों को अनुमान था कि चीन जैसे बड़े देश के आगे जापान जैसा छोटा देश युद्ध में टिक नहीं पायेगा लेकिन यूरोप के देशों का अनुमान गलत साबित हुआ। जापान की प्रशिक्षित एवं आधुनिक हथियारों से लैस सेना ने चीन को कई जगहों पर हराते हुए यालू नदी में चीनी जहाजी बेड़ा को पराजित कर दिया और समुद्र पर जापान का अधिकार स्थापित हो गया। जापान की सेना कोरिया की राजधानी सियोल पर अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया। जापानी सेना ने कोरिया से आगे बढ़ कर मंचूरिया को भी चीन से जीत लिया। चीन की मंचू सरकार जापान से युद्ध करना अब व्यर्थ समझ कर जापान से सन्धि करना ही उचित समझा। परिणाम स्वरूप चीन और जापान के मध्य शिमोनोसेकी की सन्धि (Treaty of Shimonoseki) 17 अप्रैल, 1895 को हुई। इस सन्धि की महत्वपूर्ण शर्तें निम्नलिखित थी :-

1- चीन ने कोरिया की पूर्ण स्वतन्त्रता को स्वीकार कर लिया।
2- फारमोसा और मंचूरिया का उत्तरी भाग जापान को दिया गया।
3- चीन ने जापान को 2 करोड़ (20 million) तायल (Tayal) क्षतिपूर्ति देना स्वीकार किया।
4- चीन ने जापान को 'सर्वाधिक प्रिय देश' (Most Dear Country) अधिकार अपनी भूमि पर प्रदान किया।
5- चीन ने जापान के लिए 7 नये बन्दरगाह खोलने का वचन दिया।

(शेष नोट कल उपलब्ध कराया जाएगा)

6- जब तक क्षतिपूर्ति की राशि का भुगतान न हो जाये अथवा व्यापारिक सन्धि के दायित्वों की पूर्ति न हो जाये, वी-हाई-वी (Wei Hie Wei) के बन्दरगाह पर जापान का अधिकार सुरक्षित स्वीकार किया गया।

यूरोप के राष्ट्रों की प्रतिक्रिया (Reaction of European Nations) — शिमोनोसेकी की सन्धि से एशिया और यूरोप में जापान के प्रभाव में अधिक वृद्धि हुई जिससे यूरोप के विभिन्न राष्ट्रों में प्रतिक्रिया हुई। लियोतुंग प्रायद्वीप और पोर्टआर्थर का बन्दरगाह जापान को प्राप्त होने के कारण रूस को अधिक निराशा हुई क्योंकि इससे उसके कोरिया और मंचूरिया में विस्तार का मार्ग बन्द हो गया था। यूरोप की अन्य शक्तियों का भी यह मानना था कि जापान द्वारा कोरिया पर अधिकार कर लेने के कारण शक्ति सन्तुलन का सिद्धान्त भंग हो गया था।

रूस चीन की अखण्डता को बनाये रखना चाहता था। रूस का समर्थन फ्रांस और जर्मनी ने भी किया। तीनों यूरोपीय देशों ने साम्राज्यवादी नीति का समर्थन करते हुए जापान को यह सलाह दी कि वह लियोतुंग पर अपने अधिकार को त्याग दे। जापान अकेला होने के कारण यूरोप के राज्यों से युद्ध नहीं चाहता था अतः जापान ने लियोतुंग पर अपना अधिकार छोड़ दिया। चीन को इसके बदले बड़ी धन राशि जापान को अदा करनी पड़ी। चीन को भी महाशक्तियों के मध्य हुए समझौते को स्वीकार करना पड़ा।

युद्ध के परिणाम (Consequences of the War)-

1- इस युद्ध ने चीन के मंचू शासकों की सैनिक कमजोरी को उजागर कर दिया। चीनी जनता का विश्वास इस बात पर से उठ गया कि चीन अब ईश्वरीय अनुकम्पा (favourites of God) वाला देश है। चीनी जनता का यह भी मानना था कि चीन की पराजय का कारण यह भी है कि उसने कन्फ्यूशियस के पवित्र सिद्धान्तों को छोड़कर के आधुनीकीकरण की नीति को अपनाया था।

2- चीन का अन्तिम अधीनस्थ (subservient) देश कोरिया था। कोरिया भी युद्ध में चीन के पराजय से उसके हाथ से निकल गया। चीन की सरकार प्रशासन के प्रत्येक क्षेत्र में अयोग्य सिद्ध हुई। चीन की कमजोरी की जानकारी जग जाहिर हो गई।

3- चीन-जापान युद्ध से पहले विदेशी शक्तियाँ चीन का सम्मान करती थी परन्तु युद्ध में जापान से पराजित होने के बाद चीनी प्रतिष्ठा जाती रही।

4- चीन में राष्ट्रीय भावना का अभाव था। जनता भी चीनी सरकार का युद्ध में जापान के विरुद्ध सहायता नहीं किया और पश्चिम के देशों ने चीन को अपनी साम्राज्यवादी लिप्सा का शिकार बनाया।

5- जापान की प्रतिष्ठा बढ़ गई क्योंकि उसने चीन जैसे विशाल देश को युद्ध में परास्त किया था। जापान की तुलना यूरोपीय देशों से होने लगी। जापान यहाँ से अब पूरे आत्मविश्वास के साथ साम्राज्यवाद के क्षेत्र में उतर गया।

———×———×———